parmeshwarkaniyam.org

परिशिष्ट 8i: क्रूस और मंदिर

यह पृष्ठ उस श्रृंखला का हिस्सा है जो परमेश्वर की उन व्यवस्थाओं की पड़ताल करती है जिन्हें केवल तभी माना जा सकता था जब यरूशलेम में मंदिर खड़ा था।

- परिशिष्ट 8a: वे परमेश्वर की व्यवस्थाएँ जिन्हें मंदिर की आवश्यकता थी
- परिशिष्ट 8b: बलिदान — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8c: बाइबिल के पर्व — आज इनमें से कोई भी क्यों नहीं रखा जा सकता
- परिशिष्ट 8d: शुद्धिकरण की व्यवस्थाएँ — मंदिर के बिना इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8e: दशमांश और पहिलौठे फल — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8f: परमप्रसाद सेवा — यीशु का अंतिम भोजन पास्का था
- परिशिष्ट 8g: नजीर और मन्नत की व्यवस्थाएँ — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8h: मंदिर से संबंधित आंशिक और प्रतीकात्मक आज्ञाकारिता
- परिशिष्ट 8i: क्रूस और मंदिर (यह पृष्ठ)।

क्रूस और मंदिर एक-दूसरे के शत्रु नहीं हैं, और न ही वे दो “चरण” हैं जिनमें एक दूसरे को रद्द कर देता हो। परमेश्वर की व्यवस्था सदा की है (भजन संहिता 119:89; 119:160; मलाकी 3:6)। मंदिर की व्यवस्था — अपने बलिदानों, याजकों और शुद्धता की विधियों सहित — उसी अनन्त व्यवस्था के द्वारा दी गई थी। यीशु की मृत्यु ने एक भी आज्ञा को नहीं मिटाया; उसने केवल यह प्रगट किया कि वे आज्ञाएँ शुरु से ही वास्तव में क्या कह रही थीं। मंदिर बलिदानों को समाप्त करने के लिए नष्ट नहीं किया गया, बल्कि अवज्ञा के न्याय के रूप में (2 इतिहास 36:14-19; यिर्मयाह 7:12-14; लूका 19:41-44)। हमारा काम इन सब सत्यों को साथ-साथ थामे रखना है, बिना कोई नया धर्म गढ़े जो क्रूस के नाम पर परमेश्वर की व्यवस्था को मनुष्यों के विचारों से बदल दे।

दिखाई देने वाला टकराव: मेम्ना और वेदी

पहली नज़र में एक टकराव सा दिखता है:

- एक ओर परमेश्वर की व्यवस्था है जो बलिदान, चढ़ावे और याजकीय सेवा की आज्ञा देती है (लैव्यव्यवस्था 1:1-2; निर्गमन 28:1)।

- और दूसरी ओर यीशु हैं, जिन्हें "देखो, यह परमेश्वर का मेम्ना है जो जगत के पाप उठा ले जाता है" के रूप में प्रस्तुत किया गया है (यूहन्ना 1:29; 1 यूहन्ना 2:2)।

बहुत से लोग उस निष्कर्ष पर जल्दी पहुँच जाते हैं जो पवित्रशास्त्र कभी नहीं सिखाता: "यदि यीशु मेम्ना हैं, तो बलिदान समाप्त हो गए, मंदिर का काम ख़त्म हो गया, और जो व्यवस्था इन्हें आज्ञा देती थी वह अब महत्त्व नहीं रखती।"

पर यीशु ने स्वयं इस तर्क को अस्वीकार किया। उन्होंने साफ-साफ कहा कि वे व्यवस्था या भविष्यद्वक्ताओं को लोप करने नहीं, परन्तु पूरा करने आए हैं, और यह कि जब तक आकाश और पृथ्वी टल न जाएँ, व्यवस्था का एक भी बिन्दु नहीं गिरेगा (मत्ती 5:17-19; लूका 16:17)। आकाश और पृथ्वी अभी भी हैं। व्यवस्था अभी भी खड़ी है। बलिदानों, चढ़ावों और मंदिर के बारे में जो आज्ञाएँ हैं, उन्हें उनके होंठों ने कभी रद्द नहीं किया।

क्रूस मंदिर की व्यवस्थाओं को मिटाता नहीं; क्रूस दिखाता है कि वे सचमुच किस ओर संकेत कर रही थीं।

परमेश्वर के मेम्ने के रूप में यीशु — बिना रद्द किए पूरा करना

जब यूहन्ना ने यीशु को "परमेश्वर का मेम्ना" कहा (यूहन्ना 1:29), तो वह बलिदान व्यवस्था के अंत की घोषणा नहीं कर रहे थे। वे हर उस बलिदान के सच्चे अर्थ की घोषणा कर रहे थे जो विश्वास के साथ कभी चढ़ाया गया था। पशुओं के लहू में स्वयं में कोई सामर्थ्य नहीं था (1 पतरस 1:19-20)। सामर्थ्य इस आज्ञाकारिता से आता था कि लोग परमेश्वर की आज्ञा मान रहे थे, और इस तथ्य से कि वह बलिदान एक और बड़े भविष्य के बलिदान — सच्चे मेम्ने — की ओर संकेत करता था। परमेश्वर एक बात कहकर बाद में उसे नकारता नहीं (गिनती 23:19)।

शुरु से ही क्षमा दो बातों के साथ मिलकर आती रही है:

- जो कुछ परमेश्वर ने आज्ञा दी, उसकी आज्ञाकारिता (व्यवस्थाविवरण 11:26-28; यहेजकेल 20:21)
- वह प्रबन्ध जो स्वयं परमेश्वर ने शुद्धि के लिए ठहराया (लैव्यव्यवस्था 17:11; इब्रानियों 9:22)

प्राचीन इस्राएल में आज्ञाकारी लोग मंदिर में जाते, व्यवस्था के अनुसार बलिदान चढ़ाते और वास्तविक, लेकिन अस्थायी, वाचा-संबंधी शुद्धि पाते थे। आज आज्ञाकारी लोगों को पिता सच्चे मेम्ने, यीशु, के पास ले जाते हैं, अनन्त शुद्धि के लिए (यूहन्ना 6:37; 6:39; 6:44; 6:65; 17:6)। पैटर्न वही है: परमेश्वर कभी भी विद्रोहियों को शुद्ध नहीं करता (यशायाह 1:11-15)।

यह तथ्य कि यीशु सच्चे मेम्ना हैं, बलिदानों की आज्ञाओं को फाड़ नहीं देता; बल्कि यह सिद्ध करता है कि परमेश्वर कभी केवल "खिलौने जैसे" चिन्हों से नहीं खेल रहा था। मंदिर में जो कुछ भी था वह गम्भीर था, और वह सब कुछ किसी वास्तविक बात की ओर संकेत कर रहा था।

क्रूस के बाद भी बलिदान क्यों चलते रहे

यदि परमेश्वर का उद्देश्य यह होता कि जैसे ही यीशु मरें, उसी क्षण बलिदान व्यवस्था का अन्त हो जाए, तो मंदिर उसी दिन गिर जाता। पर वास्तव में क्या हुआ?

- मंदिर का परदा तो फट गया (मत्ती 27:51), पर भवन खड़ा रहा और वहाँ आराधना चलती रही (प्रेरितों के काम 2:46; 3:1; 21:26)।
- बलिदान और मंदिर की विधियाँ प्रतिदिन चलती रहीं (प्रेरितों के काम 3:1; 21:26), और प्रेरितों के काम की पूरी कहानी एक क्रियाशील मन्दिर व्यवस्था को मानकर चलती है।
- याजक अपनी सेवा करते रहे (प्रेरितों के काम 4:1; 6:7)।

- पर्वों को अब भी यरूशलेम में मनाया जाता रहा (प्रेरितों के काम 2:1; 20:16)।
- पुनरुत्थान के बाद भी जो यीशु पर विश्वास करते थे वे मंदिर में देखे जाते थे (प्रेरितों के काम 2:46; 3:1; 5:20-21; 21:26), और हज़ारों यहूदी जो उस पर विश्वास करते थे, "व्यवस्था के विषय में सब के सब बढ़े चाव" से भरे हुए थे (प्रेरितों के काम 21:20)।

न तो व्यवस्था में, न यीशु के वचनों में, और न ही भविष्यद्वक्ताओं में कहीं यह घोषणा है कि मसीह की मृत्यु के बाद बलिदान तुरंत पाप या व्यर्थ हो जाएँगे। कोई भविष्यवाणी यह नहीं कहती, "मेरे पुत्र की मृत्यु के बाद तुम पशु लाना बन्द कर देना, क्योंकि बलिदान की मेरी व्यवस्था रद्द हो गई है।"

इसके विपरीत, मन्दिर की सेवा इसलिये जारी रही क्योंकि परमेश्वर दो-मुंहा नहीं है (गिनती 23:19)। वह किसी बात को पवित्र कहकर बाद में चुपके से उसे अशुद्ध नहीं मान लेता, केवल इसलिए कि उसका पुत्र मर चुका है। यदि बलिदान उसी क्षण से विद्रोह बन गए होते जब यीशु मरे, तो परमेश्वर इसे स्पष्ट रूप से कहता। उसने नहीं कहा।

क्रूस के बाद मन्दिर सेवा का जारी रहना दिखाता है कि परमेश्वर ने कभी भी मन्दिर-सम्बंधी एक भी आज्ञा को रद्द नहीं किया। हर चढ़ावा, हर शुद्धि-विधि, हर याजकीय कर्तव्य और राष्ट्रीय आराधना का हर कार्य मान्य रहे, क्योंकि जो व्यवस्था उन्हें स्थापित करती थी, वह बदली नहीं थी।

बलिदान व्यवस्था का प्रतीकात्मक स्वभाव

पूरी बलिदान व्यवस्था अपनी बनावट में प्रतीकात्मक थी — इसलिए नहीं कि वह वैकल्पिक या अधिकारहीन हो, बल्कि इसलिए कि वह उन वास्तविकताओं की ओर संकेत कर रही थी जिन्हें केवल स्वयं परमेश्वर ही एक दिन पूर्ण करेगा। जो चंगाइयाँ उसमें घोषित की जाती थीं वे अस्थायी थीं — चंगे लोग फिर बीमार पड़ सकते थे। जो शुद्धियाँ दी जाती थीं वे केवल कुछ समय के लिए थीं — अशुद्धता फिर लौट सकती थी। यहाँ तक कि पाप के लिए चढ़ाए जाने वाले बलिदान भी ऐसी क्षमा लाते थे जिसे बार-बार फिर से खोजना पड़ता था। इनमें से कोई भी बात पाप या मृत्यु को अन्तिम रूप से हटा नहीं रही थी; वे सब आज्ञा के अनुसार दिए गए चिन्ह थे जो उस दिन की ओर इशारा करते थे जब परमेश्वर स्वयं मृत्यु को नष्ट करेगा (यशायाह 25:8; दानिय्येल 12:2)।

क्रूस ने उस अन्तिम कार्य को सम्भव बनाया, पर पाप का वास्तविक अन्त केवल अंतिम न्याय और पुनरुत्थान के बाद ही दिखेगा, जब जिन्होंने भलाई की है वे जीवन के पुनरुत्थान के लिए, और जिन्होंने बुराई की है वे दण्ड के पुनरुत्थान के लिए उठेंगे (यूहन्ना 5:28-29)। तभी मृत्यु सदा के लिए निगल ली जाएगी।

क्योंकि मन्दिर की सेवाएँ उन अनन्त वास्तविकताओं की ओर संकेत करने वाले चिन्ह थीं, न कि स्वयं वे वास्तविकताएँ, इसलिए यीशु की मृत्यु ने उन्हें तुरंत अनावश्यक नहीं बना दिया। वे तब तक लागू रहीं जब तक परमेश्वर ने स्वयं न्याय के रूप में मन्दिर को नहीं हटा दिया — यह इसलिए नहीं कि क्रूस ने उन्हें रद्द कर दिया, बल्कि इसलिए कि परमेश्वर ने चिन्हों को काट देना चाहा, जबकि वे वास्तविकताएँ जिनकी ओर वे संकेत करते थे, अभी भी युग के अन्त में उसकी अंतिम पूर्ति की प्रतीक्षा कर रही हैं।

आज क्षमा कैसे मिलती है

यदि बलिदानों के बारे में दी गई आज्ञाएँ कभी रद्द नहीं की गईं, और यदि मन्दिर व्यवस्था क्रूस के बाद भी चलती रही — जब तक परमेश्वर ने स्वयं 70 ईस्वी में उसे नष्ट न कर दिया — तो स्वाभाविक प्रश्न उठता है: आज कोई कैसे क्षमा पा सकता है?

उत्तर वही पैटर्न है जो परमेश्वर ने शुरू से स्थापित किया था। क्षमा हमेशा परमेश्वर की आज्ञाओं की आज्ञाकारिता (2 इतिहास 7:14; यशायाह 55:7) और उसी बलिदान के द्वारा आती रही है जिसे स्वयं परमेश्वर ने ठहराया (लैव्यव्यवस्था 17:11; इब्रानियों 9:22)। प्राचीन इस्राएल में आज्ञाकारी लोग यरूशलेम की वेदी के पास आकर विधि के अनुसार चढ़ाए गए लहू के द्वारा वाचा-संबंधी शुद्धि

पाते थे (लैव्यव्यवस्था 4:20; 4:26; 4:31; इब्रानियों 9:22)। आज आज्ञाकारी वही शुद्धि मसीह के बलिदान के द्वारा पाते हैं, जो परमेश्वर का सच्चा मेम्ना है जो पाप उठाता है (यूहन्ना 1:29)।

यह किसी नई व्यवस्था का परिवर्तन नहीं है। यीशु ने बलिदान की किसी आज्ञा को नहीं मिटाया (मत्ती 5:17-19)। बल्कि जब परमेश्वर ने मन्दिर को हटाया, तो उसने केवल उस बाहरी स्थान को बदल दिया जहाँ आज्ञाकारिता शुद्धि से मिलती थी। मापदण्ड वही रहे: परमेश्वर उन को क्षमा करता है जो उससे डरते हैं और उसकी आज्ञाएँ मानते हैं (भजन संहिता 103:17-18; सभोपदेशक 12:13)। कोई भी मसीह के पास नहीं आता जब तक कि पिता उसे खींच न ले (यूहन्ना 6:37; 6:39; 6:44; 6:65; 17:6), और पिता केवल उन्हें खींचते हैं जो उसकी व्यवस्था का सम्मान करते हैं (मत्ती 7:21; 19:17; यूहन्ना 17:6; लूका 8:21; 11:28)।

प्राचीन इस्राएल में आज्ञाकारिता किसी को वेदी तक ले जाती थी। आज वही आज्ञाकारिता किसी को मसीह तक ले जाती है। बाहरी दृश्य बदल गया है, पर सिद्धान्त नहीं। इस्राएल के अविश्वासी बलिदानों के द्वारा शुद्ध नहीं किए गए (यशायाह 1:11-16), और आज के अविश्वासी मसीह के लहू से शुद्ध नहीं किए जाते (इब्रानियों 10:26-27)। परमेश्वर ने सदा यही दो बातें माँगी हैं: उसकी व्यवस्था की आज्ञाकारिता और उस बलिदान के प्रति समर्पण जिसे उसने ठहराया है।

शुरु से ही ऐसा एक भी क्षण नहीं रहा जब किसी भी पशु का लहू या किसी अन्न या मैदा की भेंट ने स्वयं में किसी पापी और परमेश्वर के बीच सच्ची शान्ति ला दी हो। वे बलिदान परमेश्वर द्वारा आज्ञा दिए गए थे, पर वे सुलह का वास्तविक स्रोत नहीं थे। पवित्रशास्त्र कहता है कि बैलों और बकरों के लहू से पाप दूर करना असम्भव है (इब्रानियों 10:4), और यह कि मसीह जगत की स्थापना से पहले से ही ठहराए हुए थे (1 पतरस 1:19-20)। अदन से अब तक परमेश्वर के साथ शान्ति हमेशा एक ही सिद्ध, पाप रहित, एकलौते पुत्र के द्वारा आई है (यूहन्ना 1:18; 3:16) — उसी के द्वारा जिसकी ओर हर बलिदान संकेत करता था (यूहन्ना 3:14-15; 3:16)। भौतिक भेंटें और चढ़ावे वे दृश्य चिन्ह थे जिनके द्वारा मनुष्य अपने हाथों से पाप की गम्भीरता को छू सके, और क्षमा की कीमत को सांसारिक चित्रों के द्वारा समझ सके। जब परमेश्वर ने मन्दिर को हटा दिया, तो आध्यात्मिक वास्तविकता नहीं बदली। जो बदला वह भौतिक रूप था। वास्तविकता वही रही: पुत्र का बलिदान ही अपराधी और पिता के बीच शान्ति लाता है (यशायाह 53:5)। बाहरी चिन्ह इसलिए समाप्त हुए क्योंकि परमेश्वर ने स्वयं उन्हें हटा दिया, पर भीतर की वास्तविकता — कि उसका पुत्र उन सब के लिए शुद्धि देता है जो उसकी आज्ञा मानते हैं — बिल्कुल बदली नहीं (इब्रानियों 5:9)।

परमेश्वर ने मन्दिर को क्यों नष्ट किया

यदि 70 ईस्वी में मन्दिर का नाश इस उद्देश्य से होता कि “बलिदान समाप्त कर दिए जाएँ”, तो पवित्रशास्त्र यह बात साफ-साफ कहता। वह ऐसा नहीं करता। इसके विपरीत, स्वयं यीशु ने उसके नाश का कारण बताया: न्याय।

उन्होंने यरूशलेम पर रोकर कहा कि इस नगर ने अपने दर्शन के समय को न पहचाना (लूका 19:41-44)। उन्होंने चेतावनी दी कि मंदिर पत्थर पर पत्थर न छोड़े जाने के लिए गिरा दिया जाएगा (लूका 21:5-6)। उन्होंने घोषित किया कि घर उजाड़ छोड़ा जाएगा, क्योंकि उस ने परमेश्वर के दूतों की नहीं सुनी (मत्ती 23:37-38)। यह बलिदानों को “बुरा” घोषित करने वाली कोई नई शिक्षा नहीं थी; यह वही पुराना न्याय का पैटर्न था — वही कारण जिसके लिए पहला मन्दिर 586 ईस्वी में नष्ट किया गया (2 इतिहास 36:14-19; यिर्मयाह 7:12-14)।

दूसरे शब्दों में:

- मन्दिर पाप के कारण गिरा, न कि इसलिए कि व्यवस्था बदल गई।
- वेदी न्याय के कारण हटाई गई, न कि इसलिए कि बलिदान असाधु हो गए थे।

आज्ञाएँ वैसे ही लिखी रहीं, पहले की तरह ही अनन्त (भजन संहिता 119:160; मलाकी 3:6)। परमेश्वर ने जो हटाया वह वे साधन थे जिनके द्वारा उन आज्ञाओं को पूरा किया जाता था।

क्रूस ने व्यवस्था के बिना कोई नया धर्म अधिकृत नहीं किया

आज जिस चीज़ को "ईसाई धर्म" कहा जाता है उसका अधिक भाग एक साधारण झूठ पर खड़ा है: "क्योंकि यीशु मर गए, इसलिए बलिदानों की व्यवस्था, पर्व, शुद्धता की विधियाँ, मंदिर और याजकपन — सब रद्द हो गए। क्रूस ने इन्हें बदल दिया।"

पर यीशु ने ऐसा कभी नहीं कहा। जो भविष्यद्वक्ता उनके विषय में पहले से बोल चुके थे उन्होंने भी ऐसा कभी नहीं कहा। इसके विपरीत, मसीह ने स्पष्ट कर दिया कि उसके सच्चे अनुयायियों को उसके पिता की वही आज्ञाएँ माननी चाहिए जो पुराने नियम में दी गई हैं, ठीक वैसे ही जैसे उसके प्रेरित और चेले मानते थे (मत्ती 7:21; 19:17; यूहन्ना 17:6; लूका 8:21; 11:28)।

क्रूस ने किसी को भी यह अधिकार नहीं दिया कि वे:

- मन्दिर की व्यवस्थाओं को रद्द कर दें,
- पास्का के स्थान पर प्रभुभोज जैसे नये अनुष्ठान गढ़ लें,
- दशमांश को पादरियों के वेतन में बदल दें,
- परमेश्वर की शुद्धता-प्रणाली को आधुनिक शिक्षाओं से बदल दें,
- आज्ञाकारिता को वैकल्पिक बना दें।

यीशु की मृत्यु मनुष्यों को व्यवस्था बदलने का अधिकार नहीं देती; वह केवल यह पुष्टि करती है कि परमेश्वर पाप के विषय में और आज्ञाकारिता के विषय में कितना गम्भीर है।

आज हमारी स्थिति: जो मान सकते हैं उसे मानें, जो नहीं मान सकते उसे आदर दें

क्रूस और मंदिर एक ऐसे अपरिहार्य सत्य में मिलते हैं:

- व्यवस्था अछूती बनी हुई है (मत्ती 5:17-19; लूका 16:17)।
- मन्दिर स्वयं परमेश्वर ने हटा दिया है (लूका 21:5-6)।

इसका अर्थ है:

- जो आज्ञाएँ अभी भी मानी जा सकती हैं, उन्हें बिना बहाना बनाए माना जाना चाहिए।
- जो आज्ञाएँ मन्दिर पर निर्भर हैं, उन्हें जैसे लिखी हैं वैसे ही मानकर आदर दिया जाना चाहिए, पर अमल में नहीं लाया जाना चाहिए, क्योंकि परमेश्वर ने स्वयं वेदी और याजकपन को हटा दिया है।

हम आज मनुष्यों की शक्ति से बलिदान व्यवस्था को फिर से खड़ा नहीं करते, क्योंकि परमेश्वर ने अभी तक मन्दिर को वापस नहीं बनाया। हम बलिदान की व्यवस्थाओं को रद्द घोषित नहीं करते, क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें कभी रद्द नहीं किया।

हम क्रूस और खाली मन्दिर-पर्वत के बीच भय और काँपते हुए खड़े हैं, यह जानते हुए कि:

- यीशु वही सच्चे मेम्ना हैं जो उन लोगों को शुद्ध करते हैं जो पिता की आज्ञा मानते हैं (यूहन्ना 1:29; 6:44)।
- मन्दिर-सम्बंधी व्यवस्थाएँ अनन्त विधियों के रूप में लिखी हुई ही रहती हैं (भजन संहिता 119:160)।
- उनका आज का असम्भव होना परमेश्वर के न्याय का परिणाम है, न कि हमारा अधिकार कि हम उनके स्थान पर कुछ और गढ़ लें (लूका 19:41-44; 21:5-6)।

क्रूस और मन्दिर साथ-साथ

सही मार्ग दोनों अतियों को अस्वीकार करता है:

- न यह कि "यीशु ने बलिदान रद्द कर दिए, इसलिए व्यवस्था का अब कोई महत्त्व नहीं।"
- और न यह कि "हम अभी अपने तरीके से, बिना परमेश्वर के मन्दिर के, बलिदान व्यवस्था को फिर से शुरू कर दें।"

इसके स्थान पर:

- हम मानते हैं कि यीशु परमेश्वर के मेम्ने हैं, जिन्हें पिता ने उन के लिए भेजा जो उसकी व्यवस्था मानते हैं (यूहन्ना 1:29; 14:15)।
- हम स्वीकार करते हैं कि परमेश्वर ने मन्दिर को न्याय के रूप में हटाया, न कि व्यवस्था को रद्द करने के रूप में (लूका 19:41-44; मत्ती 23:37-38)।
- हम हर उस आज्ञा को मानते हैं जिसे आज शारीरिक रूप से मानना सम्भव है।
- हम मन्दिर-पर-निर्भर आज्ञाओं का आदर करते हैं, उन्हें मनुष्यों के बनाये अनुष्ठानों से बदलने से इंकार करके।

क्रूस मन्दिर से टकराता नहीं; क्रूस मन्दिर के पीछे छिपे अर्थ को प्रगट करता है। और जब तक परमेश्वर वह सब पुनः स्थापित नहीं करता जिसे उसने स्वयं हटाया है, तब तक हमारा कर्तव्य साफ है:

- जो मान सकते हैं उसे मानें।
- जो नहीं मान सकते उसे आदर दें।
- कभी भी क्रूस का उपयोग उस व्यवस्था को बदलने के बहाने के रूप में न करें जिसे यीशु मिटाने नहीं, बल्कि पूरा करने आए थे (मत्ती 5:17-19)।